ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

महताब सिंह जी

सिक्ख इतिहास, भाग-दूसरा

लेखक : स. जसबीर सिंघ
क्रांतिकारी जगत गुरू नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

Websie:www.sikhworld.info
or
Websie:www.sikhhistory.in

नोट : यहां दी गई सारी जानकारी लेखक के अपने निजी विचार हैं। यह जरूरी नहीं कि सभी लेखक के विचारों से सहमत हों।

महताब सिंह जी

अगस्त, 1740 ईस्वी में श्री दरबार साहब अमृतसर की पवित्रता भंग करने वाले चंडाल मीर मुगल उलद्दीन उर्फ मस्या रंघड़ का सिर कलम करके लाने वाले योद्धा, भाई महताब सिंह 'मीरां कोटिया' तथा भाई सुक्खा सिंह 'माड़ी कम्बो' के नामों को सिक्ख जगत में कौन नहीं जानता? इन शूरवीरों ने मस्सा रंघड़ का सिर उतार के ऐसे उदाहरण प्रस्तुत किये कि सिक्ख सम्प्रदाय के प्रतिद्वन्द्वियों को यह एहसास हो गया कि गुरूद्वारों की पवित्रता भंग करने वाले दुष्टों को वैसी ही सजा मिलती रहेगी, जैसा कि मस्से रंघड़ को सबक सिखाया गया है । इस लेख में हम सरदार सुक्खा सिंह के जीवन चरित्र को चित्रण करेंगे और उसके द्वारा की गई पंथ की सेवा का वर्णन करेंगे ।

भाई सुक्खा सिंह जी के पिता सहजधारी सिक्ख थे, वह प्रशासनके भय के कारण केशाधारी नहीं बन पाये । वह अपनी उपजीविका के लिए बढ़ई का कार्य करते थे । बारह वर्ष की आयु में सुक्खा सिंह का विवाह कर दिया गया ताकि वह गृहस्थ आश्रम की दल दल में फंस जाये और भय के कारण केश धारण न करें । परन्तु सुक्खा सिंह शूरवीर साहसी योद्धा था, उसे मृत्यु का किंचितमात्र भय भी न था । उसने एक वैसाखी वाले दिन श्री दरबार साहब जाकर भाई मनी सिंह जी से अमृत धारण (अमृतपान) कर लिया । वह अब पूर्ण केशधारी सिक्ख था । यहाँ भी उसे गुरू संगत की सफलता की सूचना मिलती, वह पहुँच जाता और तन मन तथा धन से सेवा करता, इस प्रकार गुरू गाथाएं सुन सुन कर उसके हृदय में अथाह स्नेह सिक्खी के प्रति जागृत होता चला गया । वह प्रत्येक गुरू सिक्ख की सच्चे हृदय से सेवा करता परन्तु उसके मातापिता मुगल शासकों की सिक्ख विरोधी नीतियों से बहुत भयभीत रहते थे । अत: वह नहीं चाहते थे कि उनके सुपुत्र पर प्रशासन की कुदृष्टि पड़े । एक दिन इनाम की लालच में एक चुगलखोर ने सुक्खा सिंह के घर की घेराबंदी करवा दी परन्तु इतफाक से सुक्खा सिंह घर पर ही नहीं था । अत: सिंह जी सहज ही बच गये । जब सुक्खा सिंह घर पर लौटे तो उनके माता पिता ने बहुत समझाया कि हमने सिक्खों से क्या लेना देना है जो अपने जीवन को खतरे में डाल रहे हों । परन्तु सुक्खा सिंह की आत्मा इतनी बलवान हो चुकी थी कि उसे मृत्यु अथवा अन्य कोई भी भय विचलित न कर सका। जब किसी विधि से भी सुक्खा सिंह ने सिक्खी न त्यागी तो

उसके माता पिता ने उसके साथ दगा कर दिया तथा खाने में उसे कोई नशीली दवा मिलाकर खिला दी जिस कारण उसे होश न रहा । उसके केश अचेत अवस्था में काट दिये गये । जब उसे होशआया तो उसने पायाकि उसके साथ दगा हुआ है, उसने अपराधियों को दण्ड देने का विचार बनाया किन्तु वे तो उसी के अपने माता पिता थे, उन्हें वह कैसे क्षति पहुँचा सकता था। अत: दुखी होकर उसने अपनी जीवनलीला ही समाप्त करने का निर्णय ले लिया और एक कुएं में डूब मरने का विचार बनाया । जैसे ही इस दुखान्त की सूचना उसके एक सिक्ख मित्र को मिली तो वह उसे मिलने के लिए आया और उसने उसे समझाया कि इस अमूल्य शरीर को नष्ट करने का क्या लाभ ?यह तो आत्महत्या होगी जो कि महाअपराध है । मरना ही है तो जूझारू सिंहों (संघर्षरत सिंहों) के किसी जत्थे में सम्मिलित हो जाओ जहाँ तुम्हें बहुत से वीरता दिखाने के शुभ अवसर प्राप्त होंगे और तुम्हारा लक्ष्य भी पूरा हो जाएगा, जिससे तुम शहीद कहलाओगे ।

सरदार सुक्खा सिंह को मित्र का परामर्श भागया । वह सरदार शाम सिंह जी के जत्थे में सम्मिलित हो गया । परन्तु उसे एक घोड़े की अति आवश्यकता थी । उसने स्थानीय सरपंच का एक रात को घोड़ा खोल लिया परन्तु जब उसे नादिरशाह के लूटे हुए खजारे से बहुत से रूपये हाथ आये तो उसने सरपंच को उसके घर जाकर घोड़े की कीमत चुका दी ।

जहाँ चाह वहाँ राह - के कथन अनुसार सुक्खा सिंह को शस्त्र से बहुत प्रेम था, उसके इस जनून को जुझारू सिंहों के जत्थे में बढ़ावा मिला, यहीं उसने सभी प्रकार के अस्त्र - शस्त्र विद्या सीखी और वह सभी अभियानों में अग्रणी रहता । सुक्खा सिंह केवल योद्धा ही नहीं था, वह तो जीवन चरित्र से संत प्रवृत्ति का व्यक्ति था । सदैव गुरू की वाणी पढ़ता रहता, जब अवकाश का समय मिलता तो अन्य साथियों से मिलकर कीर्तन करने का अभ्यास करता रहता । उसे जब भी कोई अवसर मिलता, वह दीन दुखियों की सहायता को पहुँच जाता, उसका एक ही लक्ष्य था कि परहित में निष्काम सेवा, जो वह तन मन व धन कसे करता हुआ दिखाई देता ।

सन् 1736 ईस्वी में पँजाब के राज्यपाल जक्रिया खान ने अपनी सेना के वरिष्ठ अधिकारियों तथा विद्वानों का सम्मेलन बुलाया और उसमें उसने अपनी गम्भीर समस्या रखी

कि मैंने तथा मेरे पिता अब्दुलसमद खान ने लगभग 20 वर्ष से सिक्खसम्प्रदाय को समाप्त करने का बहुत सख्ती से अभियान चलाया, जिसमें करोड़ों रूपये व्यय हुए और हजारों अनमोल जीवन व्यर्थ गये परन्तु कोई परिणाम नहीं निकला । इसका क्या कारण हो सकता है, जबकि हमने पकड़े गये सिक्खों को सब से कष्टदायक यातनाएं देकर मृत्युदण्ड दिये हैं ताकि कोई व्यक्ति सिक्ख बनने का साहस न कर सके । परन्तु इनकी सँख्या दिनो-दिन बढ़ती ही जाती है । इसका उत्तर किसी को नहीं सूझ रहा था परन्तु वहाँ पर विराजमान शाही काज़ी अब्दुल रहिमान ने कहा - जहाँ तक मेरा विश्वास है कि इनका मुर्शद (गुरू) बहुत अजमत (आत्मबल) वाला हुआ है, वह श्री दरबार साहब के सरोवर में आब-ए-हयात (अमृत) मिला गया है, जिसे पी कर सिक्ख अमर हो जाते हैं । यदि हम इन लोगों को सरोवर से दूर रखने में कामयाब हो जाते हैं तो वह दिन दूर नहीं, ये सभी सिक्ख समाप्त हो जायेंगे ।

जक्रियाखान को अहसास हुआ कि सिक्खों की गतिविधियों का केन्द्र बिन्दु तो श्री दरबार साहब व अमृत सरोवर ही है शायद काज़ी की बात में कोई तथ्य हो, चलो यह काम भी कर के देख ही लेते हैं । बस फिर क्या था, उसने इस कार्य के लिए दो हजार सिपाही काज़ी अब्दुल रहिमान को देकर उसी की नियुक्ति अमृत सरोवर पर कर दी, ताकि वह सिक्खों को सरोवर में स्नान करने से रोकने में सफल हो सके । जब अमृतसर का कोतवाल बन कर काज़ी अब्दुल रहिमान दो हजार सैनिक के साथ दरबार साहब की परिसर में पहुँचा तो उसने वहाँ श्रद्धालुओं के आने पर पूर्णत: प्रतिबन्ध लगा दिया और जो भी उस समय स्नान अथवा भजन करने में व्यस्त थे, उन्हें गिरफ्तार करके इस्लाम कबूल करने को कहा, इस्लाम कबूल न करने पर उन्हें कड़ी यातनाएं देकर मृत्यु दण्ड दिया गया । तद्पश्चात दोण्डी पिटवाई गई कि - है कोई ऐसा सिक्ख ! जो अब अमृत सरोवर में स्नान करके दिखा दे ?

इस चुनौती को जत्थेदार शाम सिंह के शूरवीरों ने स्वीकार किया । इन योद्धाओं में सरदार सुक्खा सिंह व सरदार थराज सिंह (भाई मनी सिंह जी के भतीजे) अग्रणी थे । एक दिन अमृत वेला (भोर के समय) में पचास जवानों के जत्थे ने साथ के रिलवाली दरवाज़े के बाहर पहुँच गये । उन्होंने स्वयँ अमृत सरोवर में स्नान किया और जो समय बहुत ज़ोरों से जयकारे लगाए । जिसे सुनकर शत्रु सुचेत हुआ और उनका पीछा करने लगा । सिक्खों का पीछा करने वालों में स्वयं अब्दुल रहिमान और उसका बेटा भी था, जैसे ही ये लोग रिलवाली

दरवाजें के निकट पहुँचे तो वहाँ घात लगाकर बैठे हुए सिंहों ने इन पर आक्रमण कर दिया । उस घमासान युद्ध में काज़ी अब्दुल रहिमान और उसका बेटा मारा गया ।

मस्सा रंघड़ द्वारा दरबार साहब की पवित्रता भंग

जैसा कि आप पिछले अध्यायों में पढ़ चुके हैं कि लाहौर के राज्यपाल जक्रिया खान ने नादिरशाह की भविष्यवाणी को आधार बनाकर कि जल्दी ही सिक्ख लोग पँजाब के सुलतान (शासक) बन जाएंगे । सिक्खों के विरूद्ध उनके सर्वनाश का अभियान चलाना प्रारम्भ कर दिया । इस अभियान में उसने सभी गाँवों तथा देहातों की पँचायतों के सरपंचों तथा चौधरियों को आदेश दिया कि वे किसी भी सिक्ख को जीवित न रहने दें ।

इस कार्य के लिए पुरस्कार की लालच में छीने ग्राम के चौधरी करमे, तलवाड़ी ग्राम के रामे रंधावे तथा नौशहरा क्षेत्र के साहब राय संधु बहुत सरगर्मी से भाग लिया । उन्होंने हज़ारों निरपराध सिक्ख परिवारों को मरवा दिया । उन्होंने सिक्खों के सिरों की बैलगाड़िया भर भर करके लाहौरभेजी और मुगल हाकिमों से नकद पुरस्कार प्राप्त किये । इसप्रकार जंडियाले क्षेत्र का चौधरी हरि भक्त निरंजनिया, धर्मदास टोपी, जोधे नगरिया, बुशैहरे पुनूंआ तथा मजीठ ग्रामों के चौधरी भी इस काम में बहुत बढ़ चढ़ कर हिस्सा ले रहे थे । परन्तु सभी चौधरियों से उग्र रूप धारण किया हुआ था, मंडियाला क्षेत्र का चौधरी मीर मुसाल उलद्दीन (मस्सा रंघड़) इसने अत्याचारों की अति ही कर दी थी और इसने सभी से बढ़ कर जक्रिया खान से नकद राशि प्राप्त की । अत: इसके अत्याचारों से प्रसन्न होकर इसे जक्रिया खान ने अमृतसर का कोतवाल नियुक्त कर दिया क्योंकि इससे पहला कोतवाल अपने जुल्मों-सितमों के कारण, 'काज़ी अब्दुल रहिमान' भाई सुक्खासिंह के जत्थे द्वारा मारा जा चुका था ।

मस्सा रंघड़ एक राजपूत ज़िमीदार था । इसने इस्लाम स्वीकार कर लिया था । यह अमृतसर से चार कोस दक्षिण की ओर स्थिति मंडियाला देहात का निवासी था । इसके चेहरे पर एक मस्सा था और इसकी जाति रंघड़ थी, अत: लोग इसे इसके वास्तविक नाम से न पुकार कर उप नाम से पुकारते थे चौधरी 'मस्सा रंघड़' । जक्रिया खान ने मस्सा रंघड़ को अमृतसर

का कोतवाल बनाते समय एक विशेष कार्य सौंपा कि कोई भी सिक्ख श्री दरबार साहब के निकट न आने पाये तथा वे अमृत सरोवर में किसी प्रकार भी स्नान न करने पाये । यदि कोई ऐसा करता हुआ पाया जाता है तो उसे तुरन्त गोली मार दी जाये अथवा मृत्यु दण्ड दिया जाये । ऐसे में मस्सा रंघड़ ने श्री दरबार साहब के मुख्य स्थान हरिमन्दिर को एक नाचघर का रूप दे दिया । जहाँ वह सुसपान, धुम्रपान और वैश्याओं का नृत्य आदि देखने लगा । जब उसकी इस एय्यासी की बात स्थानीय सहजधारी सिक्खों के कानों में पड़ी तो उन्होंने तुरन्त इस दुखांत की सूचना दल खालसा के किसी एक जत्थे को भेजने का प्रयत्न किया, जो उन दिनों दूर – दराज क्षेत्रों में विचरण कर रहे थे । इस कार्य के लिए उन्होंने अपने दूत के रूप में भाई बुलाका सिंह को बीकानेर भेजा । उन दिनों वहाँ जत्थेदार बुड्ढा सिंह तथा शाम सिंह के जत्थे प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे थे ।

जत्थेदार बुड्ढा सिंह को भाई बुलाका सिंह ने बहुत भावुकता में श्री दरबार साहब की पवित्रता भंग होने का समाार सुनाया । उस समय उनके नेत्र करूणामय पीड़ा से द्रवित हो उठे। जत्थेदार बुड्ढा सिंह जी ने इस दुखान्त का बहुत गम्भीरता से विश्लेषण किया और तुरन्त सभा बुलाई (दीवान सजाया) और समस्त शूरवीरों को इस दुर्घटना से अवगत करवाया । मस्सा रंघड़ की काली करतूतें सुनकर योद्धों का खून खौल उठा, वे तुरन्त पँजाब प्रस्थान करने पर बल देने लगे किन्तु जत्थेदार साहब ने कहा – हमारी संख्या बहुत कम है । अत: हम सीधी टक्कर नहीं ले सकते, इस समय हमें युक्ति से काम लेना चाहिए । इस प्रकार उन्होंने अपने सभी जवानों को ललकारा और कहा है – है कोई योद्धा ! जो मस्सा रंघड़ का सिर युक्ति से काट कर हमारे पास प्रस्तुत करे ।

इस पर सरदार महताब सिंह खड़ा हुआ और उसने निवेदन किया कि उसे भेजा जाये क्योंकि वह उसी क्षेत्र का निवासी है, भौगोलिक स्थिति का ज्ञान होने के कारण सफलता निश्चित ही मिलेगी । तब जत्थेदार बुड्ढा सिंह ने सभा को सम्बोधन करके कहा – इसकी सहायता के लिए कोई और जवान भी साथ में जाए । इस पर भाई सुखा सिंह जी ने स्वयं को प्रस्तुत किया और कहा – मैं महताब सिंह का सहयोगी बनूगां क्योंकि मैं भी वहीं निकट के गाँव माड़ी कम्बो का रहने वाला हूँ । दोनों योद्धाओं की सफलता के लिए सभी जवानों ने मिलकर गुरू चरणों में प्रार्थना की और उन्होंने शुभ कामनाओं के साथ उनको विदा किया ।

इन दोनों योद्धाओं ने बहुत विचारविमर्श के पश्चात् एक योजना बनाई, जिसके अनुसार इन्होंने अपनी वेश-भूषा मुगल सैनिकों जैसी बना ली और यात्रा करते हुए अमृतसर के निकट पहुँच कर फूटे हुए घड़ों के टुकड़ों को गोल गोल बनाकर एक रूपये के सिक्कों का रूप दिया और उन टोकरियों की थैलियां भर ली और सीधे दरबार साहब की दर्शनी डयोढ़ी के निकट लीची बेरी के वृक्ष के साथ घोड़े बांधकर अन्दर प्रवेश करने लगे तो वहाँ तैनात संतरियों ने पूछा तुम कौन हो ?इसके उत्तर में महताब सिंह ने कहा - हम नम्बरदारों से लगान इक्ट्ठा कर के लाये हैं जो कि कोतवाल साहब को देने जा रहे हैं। संतरियों ने उनके हाथों में थैलियाँ देखकर उन्हें अन्दर जाने दिया। मुख्य स्थल हरि मन्दिर में पहुँचकर उन्होंने जो अन्दर का दृश्य देखा तो उन शूरवीरों का खून खौल उठा। मस्सा रंघड़ चारपाई पर बैठा नशे में द्युत हुक्का पी रहा था और कंचरियों का मुज़रा देख रहा था। तभी भाई महताब सिंह जी ने थैलिया पलंग के नीचे फैंकते हुए कहा - हम लगान लाये हैं, जैसे ही मस्सा रंघड़ ने पलंग के नीचे झांकने का प्रयत्न किया, तभी सरदार महताब सिंह ने बिजली की गति से तलवार केएक ही वार से उसका सिर कलम कर (उतार) दिया। यह देखकर मस्सा के सभी साथी घबरा कर इधर उधर भागने लगे। तभी द्वार पर खड़े सुखा सिंह ने कड़क कर कहा - कोई भी अपने स्थान से हिलेगा नहीं, किसी ने हिलने की कोशिश की तो हम उसे मौत के घाट उतार देंगे। इतने में महताब सिंह ने मस्सा के सिर को थैले में डाला और उसे कंधे पर लटका कर बाहर चले आये। बाहर खड़े संतरियों ने अपने लिए इनाम माँगा, इस पर सुखा सिंह व महताब सिंह ने उनको वहीं तलवारों से झटका दिया और घोड़े खोल कर वापिस निकल भागे।

मस्से की हत्या की सूचना पाकर पँजाब का राज्यपाल जक्रिया खान बहुत लाल पीला हुआ। उसने अमृतसर के आसपास के परगनों के चौधरियों को बुलाकर कहा - 'मस्से के हत्यारे को पकड़ कर पेश किया जाये'। हरिभक्त निरंजनीवे नामक चौधरी ने मुखबरी की कि यह कांड किसका किया हुआ है ?

लम्बी यात्रा करते हुए दोनों सिंह बीकानेर नगर पहुँच गये। उन्होंने मस्से रंघड़ के सिर को भाले पर टांग कर सिंहों की भारी सभा में मस्से रंघड़ के सिर को प्रस्तुत किया। इस विजय को देखकर चारों ओर जयकारों की गर्ज होने लगी। यह घटना सन् 1740 के अगस्त माह में घटित हुई।

सिक्खों द्वारा किले का निर्माण

नादिरशाह के आक्रमण के कारण फैली बेचैनी से लाभ उठाने के लिए दल खालसा के नायक नवाब कपूर सिंह जी ने सिक्खों के लिए किसी सुरक्षित स्थान की कल्पना की । जब उनके हाथ नादिर की लूट का माल लगा तो उन्होंने उसे सुरक्षित करने के लिए उस कल्पना को साकार रूप दे दिया । उनके निर्देश अनुसार डल्लेवाल नामक स्थान पर एक किले का निर्माण किया गया । यह स्थान अमृतसर की उत्तर – पश्चिम दिशा में रावी नदी के तट पर स्थित है और इसके इर्द – गिर्द घने जंगल थे । इस स्थल के चुनाव में बड़ी गहरी कूटनीति छिपी हुई थी । एक तो वहाँ से सिक्खों के पवित्र तीर्थ की रक्षा की जा सकती थी, दूसरे आवश्यकता पड़ने पर सिक्ख सैनिक वहाँ पर आश्रय भी ले सकते थे। मुगल सरकार के जासूस भी इस रहस्य से भली भान्ति परिचित थे। भले ही मुगल किलों की तुलना में सिक्खों का यह किला एक तुच्छ सा स्थान था, तथापि यह इस बात का सूचक था कि अपनी राजनैतिक सत्ता स्थापित करने के लिए सिक्ख दूरदृष्टि रखते हैं और आने वाली कठिनाइयों के लिए सजग थे ।

जैसे ही नादिरशाह ने जक्रिया खान को सिक्खों के विरूद्ध भड़काया कि वह तेरी सत्ता हड़प सकते हैं, बस फिरक्या था, वह अपनी सम्पूर्ण शक्ति से सिक्खों को उखाड़ कर पँजाब से बाहर करने में लग गया । जैसे ही उसे डल्लेवाल के किले के निर्माणकी सूचना मिली, उसने उस पर आक्रमण कर दिया परन्तु वह तो अभी निर्माणाधीन ही था, सिक्ख उसका प्रयोग कर ही नहीं सकते थे । अत: उस क्षेत्र को विराना छोड़कर सिक्ख फिर से अन्य शरण स्थलों में चले गये । जिससे जक्रिया खान ने अधूरे किले को फिर से मिट्टी में मिला दिया ।